|| श्रीहरिः ||
वसुदेवसुतं देवं कंसचाणूरमर्दनम् |
देवकीपरमानन्दं कृष्णं वन्दे जगद्गुरुम् ||

|| श्रीमद्भगवद्गीता विवेचन सारांश ||

अध्याय 12: भक्तियोग

2/2 (श्लोक 11-20), शनिवार, 10 अगस्त 2024

विवेचक: गीता विशारद डॉ. संजय जी मालपाणी

यूट्यूब लिंक: https://youtu.be/bBlj-06wnLg

प्रिय भक्त के गुण

श्रीभगवान श्रीजगन्नाथ जी की असीम कृपा एवम् पूज्य गुरुदेव जी के आशीर्वाद से दीप प्रज्वलन एवं प्रार्थना के पश्चात सत्र का आरम्भ हुआ। पूज्य गुरुदेव जी का चित्र अथवा गीता परिवार का बोध चिह्न दिखाई नहीं भी दे तो कोई बात नहीं। ये सभी बोध चिह्न निमित्त मात्र होते हैं। ये चिह्न हमारे हृदय में बने होने चाहिए। हम हृदय में सदैव गुरुदेव का स्मरण करते हैं। परमपूज्य गुरु गोविन्ददेव गिरि जी महाराज, जिनकी अनुकम्पा से ये सारा उपक्रम चल रहा है, उनके आशीर्वाद से दस लाख साधक इस उपक्रम के साथ जुड़ गए हैं। उन्हीं के साथ- साथ समस्त गुरु परम्परा को वन्दन करते हैं।

गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुःगुरुर्देवो महेश्वरः।

गुरुःसाक्षात् परब्रह्म तस्मै श्रीगुरवे नमः।।

हम बारहवें अध्याय, भक्तियोग का चिन्तन कर रहे हैं। सबसे प्यारा, सबसे मीठा, भक्ति रस है। वैसे भी शर्करा युक्त होता है, सबसे मधुर होता है। सबसे सरल, सबसे अर्थपूर्ण, रसपूर्ण इस प्रकार का यह अध्याय है।

श्रीभगवान ने दूसरे अध्याय में सांख्ययोग अर्थात् ज्ञानयोग बताया, तीसरे अध्याय में कर्मयोग बताया। तदुपरान्त विराटस्वरूप दिखाने के पश्चात भक्तियोग सिखाया। इस बात को समझना अत्यन्त आवश्यक है। ग्यारहवें अध्याय में श्रीभगवान अपना विराट स्वरूप दिखाते हैं, विश्वरूप दर्शन कराते हैं, अपना योगेश्वर रूप दिखाते हैं, उसके पश्चात भक्तियोग सिखाते हैं। दसवें अध्याय में विभूतियाँ दिखाईं कि मैं कहाँ-कहाँ हूँ, ये तुम जान लो अर्जुन। श्रीभगवान अपने भक्तों से इतना प्रेम करते हैं कि अपने भक्त की प्रत्येक क्षुधा बुझाते हैं, प्रत्येक हठ को भी पूरी कर देते हैं। जब अर्जुन का मन नहीं भरा तब अर्जुन की हठ पर उनको ये यौगिक, अद्भुत रूप दिखाया। सर्वगुण, स्वाभाविक, साकार रूप जब अर्जुन ने देख लिया है तो उनको समझना अर्जुन के लिए सम्भव ही होगा, परन्तु हम जैसे अज्ञानियों के लिए बहुत सरल तरीके से अपनी बात समझायी।

मय्येव मन आधत्स्व मयि बुद्धिं निवेशय।
निवसिष्यसि मय्येव अत ऊर्ध्वं न संशयः।।12.8।।

श्रीभगवान आठवें श्लोक में कहते हैं मेरे अन्दर मन को लगा ले। मन और बुद्धि दोनों का लगाना आवश्यक है। श्रीभगवान भी एक कदम आगे बढ़ाते हैं। भक्तियोग का रस अनोखा है। यह एक तरफा रास्ता नहीं है। आना और जाना (incoming outgoing) दोनों तरफ से चलता है। आप एक कदम बढ़ाइए, श्रीभगवान भी एक कदम आगे बढ़ाएँगे क्योंकि वे भी भाव के भूखे हैं और हमें लगता है हमारे भोग दिखाने से उनका पेट भर रहा है, ऐसा नहीं हैं। उस समय जो हमने मन में परिवर्तन किया, मन में जो भाव जगा, उसके भूखे हैं श्रीभगवान किन्तु हमारा भोग दिखाना भी बड़ा औपचारिक हो गया है। हम थाली लेकर जाते हैं, श्रीभगवान के सामने रखते हैं, घण्टी बजाते हैं, हाथ में पानी लेकर घुमा दिया और उठा ली थाली। श्रीभगवान हमारे छोटे-छोटे विग्रह में हैं। यदि इसी समय में श्रीभगवान की खाना खाने की इच्छा भी हो गई कि हमारे हाथ का खाना खाएँ उतनी ही देर में हम थाली उठा लेते है और वहाँ से निकल जाते हैं। क्या ये भाव परोसना हुआ? हम कितने भी छप्पन भोग बना लें, यदि उसमें भाव नहीं हैं तो श्रीभगवान का भोग लगता ही नहीं। मन और बुद्धि दोनों अर्पण करके रोमाञ्चित हो जाना चाहिए कि जैसा भी बना है, मैं लेकर आई हूँ, भोजन कराऊँगी। आज इस भाव के साथ वहाँ बैठ जाना। वे हमारे दो ग्रासों के भूखे नहीं हैं। वे तो तीनों जगत के नियन्ता हैं। जो सारे जगत की भूख मिटाते हैं वो क्या हमारी एक थाली भर भोजन के भूखे हैं? कदापि नहीं। थाली भर भोजन दिखाने मात्र से हमारा ही भला होगा।

कहा भी गया है-

जैसा अन्न वैसा मन

जैसा पानी वैसी वाणी।

ऐसा करने से हमारा ही लाभ है। इस क्रिया के फलस्वरूप हम शुद्ध भोजन तैयार करते हैं। फिर हाथ-पैरों की शुद्धता करते हैं। तीसरी बात हम अपने मन को भी निर्मल करते हैं। फिर इस निर्मल मन से हम भोजन प्रसाद स्वरूप में ग्रहण करते हैं। तब हमारी चित्त वृत्तियाँ भी सात्त्विक बनने लगती हैं। ये उस प्रसाद रूप भोजन का माहात्म्य है। वहाँ बुद्धि और मन दोनों अर्पण हो जाएँ और जहाँ जिस काम में दोनों अर्पण कर दिए वहाँ उस काम में यश निश्चित है। जैसे यदि एक छात्र कक्षा में पढ़ता है और शिक्षक फलक पर कुछ लिख रहे हैं। छात्र का सिर, मस्तिष्क, आँखें वहाँ हैं, लेकिन मन घर पर चला गया कि आज रसोई में क्या बना होगा? आज खाने को क्या मिलेगा? मामा का बेटा आया हुआ है, उसके साथ खेलने को मिलेगा? इस प्रकार का चिन्तन यदि चल रहा है तो कक्षा में जो चल रहा है, वह उसे ग्रहण नहीं कर पाएगा परन्तु वही बच्चा मन अर्पण करके कक्षा में पढ़ता है तो उसे घर पर पुनः पठन की आवश्यकता नहीं पड़ेगी।

अब ये मन और बुद्धि साथ-साथ कैसे जुड़ें, इस जुड़ाव का नाम है, योग। युज् धातु का मतलब जोड़ना है, एक दूसरे में जमा करना है। योग मन को बुद्धि से कैसे जोड़ता है? जब-जब मन किसी नकारात्मकता में जाता है, किसी दुःख, निराशा, भय में चला जाता है, आपकी साँस फूलने लगती है, आप जल्दी-जल्दी साँस लेने लगते हैं। इसके विपरीत साँस को नियन्त्रित कर लिया तो मन नियन्त्रित हो जाता है। इसके लिए एक अभ्यास है, पैंतालीस सैकण्ड का। मन में क्रोध या बुरा विचार आया तो पैंतालीस सैकण्ड रुक जाइए।

दस लम्बी गहरी साँसें लें और धीरे-धीरे छोड़ें। पैंतालीस सैकण्ड में जैसे ही आपकी साँस धीमी हुई वैसे ही मन शान्त हो जाता है। जिस मन में क्रोध की अग्नि भड़क रही थी, निराशा के बादल छा गए थे, तनाव का तूफान आया हुआ था, वो सारे थम जाते हैं और मन शान्त हो जाता है। तब मन को साथ जोड़ें तो बुद्धि बताएगी, क्या काम करना है? क्रोध में लिया गया कोई भी निर्णय और क्रोध में कही गई कोई बात आपको यशस्विता तक नहीं पहुँचा सकती इसलिए क्रोध, दुःख, निराशा पर संयम रखना। ये सब अस्थायी हैं, यह बात समझना आवश्यक है। शरीर प्रकृति से प्राप्त है। प्रकृति में जैसे ऋतु बदलती है, कभी दुःख काल रहता है, कभी वर्षा आ जाती है, वैसे ही मन में भी बदलाव होते हैं, उथल-पुथल होती है।

पूर्णिमा की रात्रि में सागर में ऊँची-ऊँची लहरें उठती हैं। कहाँ वह चन्द्रमा कहाँ सागर, परन्तु सागर में उथल-पुथल आरम्भ हो जाती है। हमारे शरीर में भी सत्तर प्रतिशत पानी है, हड्डियों के रूप में भूमि है। भूमि, भूमि में मिल जायेगी एक दिन। दाह संस्कार होते ही सारा पानी भाप बन जायेगा। ये सारा पञ्च महाभूतों का बना शरीर वहीं विलय हो जायेगा लेकिन हमें पहचानना होगा कि यह शरीर प्रकृति से बना है तो उथल-पुथल तो होगी ही। जैसे अमावस्या या पूर्णिमा के होने से समुन्दर की लहरों में उथल-पुथल हो सकती है, वैसे ही हमारे शरीर में सत्तर प्रतिशत पानी में उथल-पुथल तो होगी ही लेकिन उस मन को कैसे संयमित किया जाता है?

प्राणापानौ समौ कृत्वा।

प्राण और अपान वायु को समत्त्व के साथ भर लो। पैंतालीस सैकण्ड धीमे-धीमे साँस लें साँस छोड़ें। किसी भी मुख्य सभा, साक्षात्कार में जाना हो या आवश्यक बात करनी हो, पैंतालीस सैकण्ड ये कर लें तब पता चलेगा, आपकी विजय होगी। श्रीमद्भगवद्गीता विजय का शास्त्र है। अर्जुन जीतें इसलिए श्रीभगवान ने गीता कही। भगवद्गीता का उद्देश्य ही अर्जुन को युद्ध के लिए प्रवृत्त करना और उन्हें जिताना था परन्तु युद्ध मन और बुद्धि के समन्वय से ही जीते जा सकते हैं। उसकी ऊर्ध्व गति होगी, इसमें कोई संशय नहीं है। उसके लिए पूर्ण श्रद्धा के साथ शबरी की तरह नवधा भक्ति करनी होगी।

1) श्रवण

2) कीर्तन

3) स्मरण

4) पाद सेवन

5) अर्चन

6) वन्दन

7) दास्य

8) साख्य

9) आत्म निवेदन

ये है नवधा भक्ति। यदि आप किसी को अपने मन की बात नहीं कह सकते तो जाइए बैठ जाइए श्रीभगवान के पास, सुनाइए उनको मन की बात, सुनते हैं वे। जैसे आप किसी पहाड़ पर जााएँ और जोर से आवाज निकालें राम-राम। पहाड़ों से प्रतिध्वनि गुञ्जित होती है, राम-राम। आप राम की आवाज बोलें तो वही सुनाई देगी। जब हम श्रीभगवान से आत्मनिवेदन करते हैं तो इस अभ्यास से हम उनको प्रिय होने लगते हैं। श्रीभगवान एक कदम आगे आते हैं और कहते हैं कि ये भी मुश्किल लगता है तो कोई बात नहीं। ये करके देखो। वे आसान करके बताते हैं-

अभ्यासेऽप्यसमर्थोऽसि मत्कर्मपरमो भव।
मदर्थमपि कर्माणि कुर्वन् सिद्धिमवाप्स्यसि।।

12.10

अभ्यास में भी यदि असमर्थ हैं तो कोई बात नहीं। तुझे और सरल करके बताता हूँ। तू जो भी काम कर रहा है, मेरे लिए कर। मेरे लिए काम कर रहा है, इस भाव के साथ आगे बढ़ तुझे सिद्धि प्राप्त हो जाएगी।

जब विवेचक भगवद्गीता कण्ठस्थ कर रहे थे और उसी में डूबे हुए थे, सुबह उठते ही शुरू हो जाते थे, हर समय सुनते रहते थे। कपड़े बदलते हुए भी मोबाइल में रिकार्ड करके सुनते रहते। प्रवास में जाते तब भी बोलते रहते, फ्लाइट में गीता की पुस्तक लेकर जाते। दो वर्ष गीतामय बन गए। अविश्वसनीय परन्तु सत्य है, एक दिन उन्होंने देखा कि उनके साथ कुछ अजीब घटना घट रही है। किसी भी किताब को पढ़ने का समय घट गया। पूरा पृष्ठ याददाश्त में आने लगा। उन्होंने अपने मित्रों को बताया तो उन्होंने परीक्षा ली। एक क्षण

के लिए किताब दी और कहा कोई भी एक पृष्ठ देखो। उसके सारे के सारे अक्षर एक साथ विवेचक के अन्दर खिंचे चले जाते थे।

जैसे एक छोटे बच्चे ने समाचार पत्र पढ़ना शुरू किया। आपको उसे टाइम्स ऑफ इण्डिया पढ़ते देखकर आश्चर्य हुआ। उससे पढ़कर सुनाने को कहा। वो उसके एक-एक अक्षर को पढ़ता है। वो ही बच्चा दूसरी, तीसरी, चौथी कक्षा में आ जाता है तो उसे एक साथ पढ़ना सीख जाता है। जैसे-जैसे बच्चा बड़ा होता है उसे एक साथ कई शब्द खींचने की आदत लग जाती है। भगवद्गीता पढ़ते-पढ़ते विवेचक को भी ऐसा होने लगा, लगा पूरा पृष्ठ एक साथ खिंचा आ रहा है। अब जब भगवद्गीता कण्ठस्थ हो गई, गीताव्रती बन गये तो अभ्यास की आवश्यकता नहीं रही। दैनिक एक अध्याय पढ़ लेते हैं। एकादशी के दिन तीन अध्याय पढ़ लेते हैं। ये सिद्धियाँ बड़ी आसानी से आती हैं परन्तु जो सिद्धियों में अटक गए उनका सत्यनाश हो जाता है। जो सिद्धि आने पर भी आगे चलते रहते हैं वो पहुँच जाते हैं।

श्रीभगवान कहते हैं, तू बस मेरे लिए काम कर। तुझे जो भी आवाज सुनाई देती है वो मेरी ही आवाज है। योगासन के बाद शवासन में शेष समय में नहीं सुनाई देने वाली आवाजें सुनाई देने लगती हैं। आस-पास पेड़ पर पञ्छियों की आवाज सुनाई देती है जो कि शेष समय सुनाई नहीं देती। हम जब अन्दर से शान्त होते हैं तो शेष आवाजें सुनाई देती हैं। जब हम एकाग्रचित्त हो जाते हैं, सजगता के साथ शवासन करते हैं तो हृदय की धड़कन, धमनियों में बहते रक्त की आवाज भी सुनाई देती है। ये सारी आवाजें प्रभु का गुणगान है। प्रभु हैं तभी तो धमनियों में रक्त बह रहा है, हृदय धड़क रहा है। जब तब वो मेरे आत्मरूप से मेरे अन्दर सिद्ध है, तब तक मैं जीवित हूँ, तब तक साँस की भी आवाज चल रही है, कोहं-कोहं पर जैसे ही शवासन में लेटकर आवाज सुनते तो सुनाई देता, सोहं-सोहं। मैं वो ही हूँ और जब हम भगवान्वय होकर सारे काम उनको अर्पण किए जा रहे हैं, दुकानदार हैं तो ग्राहक में उनका रूप देख रहे हैं, रसोई कर रहे हैं तो उनका भोग लगाने के लिए ही बना रही हूँ, ये भाव मन में रखें। जब सारे काम उनको समर्पित करके करते हैं तो सारी आवाजें स्वाभाविक रूप से भगवान्मय सुनाई देती हैं।

जीवों का जो भी कलरव दिन भर सुनने में मेरे आवे,

तेरा ही गुणगान जान मन प्रमुदित हो अति सुख पावे।

ऐसा घटित होता है। एक बार विवेचक किसी के घर गये। बच्चे खेल रहे थे। बच्चों के दादा जी कहने लगे अन्दर चलकर बात करते हैं, यहाँ अत्यन्त शोर है। विवेचक ने कहा यह तो यह गोकुल है। बच्चों की आवाज श्रीभगवान की आवाज से क्या कम है? हम यहीं बैठकर बात करेंगे और बच्चों की आवाज आनन्द देती है। मन यदि नकारात्मक हो तो वो आपको कष्ट देती है। मन यदि सकारात्मक हो तो वही आवाज आपको प्रसन्नता देती है।

12.11

अथैतदप्यशक्तोऽसि, कर्तुं(म्) मद्योगमाश्रितः|
सर्वकर्मफलत्यागं(न्), ततः(ख्) कुरु यतात्मवान्||11||

अगर मेरे योग (समता) के आश्रित हुआ (तू) इस (पूर्व श्लोक में कहे गये साधन) को भी करने में (अपने को) असमर्थ (पाता) है, तो मन इन्द्रियों को वश में करके सम्पूर्ण कर्मों के फल की इच्छा का त्याग कर।

विवेचनः- श्रीभगवान कहते हैं-

सर्व कर्म का फल त्यागना सीख।
मेरे लिए तो कर्म कर ही,

उसके फल की अपेक्षा त्याग दे।

बचपन से टी वी पर देखा था, काम करते चलो, फल की आशा मत करो। बस यही बात यहाँ समझायी गई है। काम करते रहो, फल तो मैं दूँगा ही। मुझे जो देना है मैं दूँगा ही, तुम चिन्ता मत करो। आम का पेड़ लगाओगे तो आम ही खाओगे। बबूल बोओगे तो बबूल ही आयेंगे किन्तु मैं ही सारे आम खाऊँगा, ये अपेक्षा छोड़ दो। जब आयेगा तब आयेगा, जिसको मिलेगा सो मिलेगा, मैं खाऊँ या न खाऊँ, मैं तो आम का पेड़ लगा के रहूँगा। जिस दिन फल की अपेक्षा छोड़ दी उस दिन एक अद्भुत घटना घटती है।

एक उदाहरण से देखें। गीता परिवार से जुड़ी एक महिला का नेपाल से फोन आया। उसका बेटा बहुत परेशान था। बहुत होशियार था। दसवीं और बारहवीं में अठानवे प्रतिशत अङ्क आए। उसे हार्वर्ड विश्वविद्यालय में प्रवेश लेना था। दो बार परीक्षा दी परन्तु सफलता नहीं मिली। प्रवेश नहीं मिलने से वह उद्विग्न था, निराश था। बात करने पर उससे कहा गया देखो तुम्हारी माँ और हम गीता परिवार से जुड़े हैं और गीता पर हमारा पूरा भरोसा है। गीता में कहा है-

सर्वकर्मफलत्यागन्

तुम हार्वर्ड में प्रवेश पाने के लिए पढ़ाई कर रहे हो। अब ज्ञान की प्राप्ति के लिए पढ़ाई करो, फिर देखो क्या परिणाम आते हैं। उसने हार्वर्ड दिमाग से निकाल दिया। दो बार वैसे भी नहीं हुआ था। तीसरी बार क्या हो जायेगा, यही सोचकर उसने दिमाग से निकाल दिया। ज्ञान की प्राप्ति के लिए उसने पढ़ाई की। एक महीने बाद फिर नेपाल से फोन आया। भैया हार्वर्ड में प्रवेश मिल गया। जब अपने दिमाग से अपेक्षा का बोझ उतार देते हैं उसी क्षण हमारे कार्य सिद्ध होने लगते हैं।

एक बार अकबर और बीरबल जङ्गल में शिकार के लिए गए। मूसलाधार बारिश होने से एक पेड़ के नीचे रुक गए। दोनों घोड़ों पर थे। यहाँ-वहाँ देख रहे थे। नाले में बहुत पानी आया हुआ था। दूसरे तीर से एक लड़का सिर पर लकड़ी का गट्ठर लिए हुए दौड़ता हुआ आया और एक छलाङ्ग में इस तीर पर आ गया। अकबर ने कहा यह तो अद्भुत है। मेरा घोड़ा भी इस नदी को एक छलाङ्ग में पार नहीं कर सकता, तुमने कैसे किया? युवक बोला इसमें क्या है? ये तो मेरा नित्य का काम है। अकबर ने उससे कहा- मैं तुम्हें सोने की मुहर दूँगा, तुम एक बार फिर से करके दिखाओ। युवक मान गया। बीरबल हँसने लगे। सोने की अपेक्षा अब उसके माथे चढ़ गई है। युवक ने दौड़ना आरम्भ किया। जैसे ही छलाङ्ग लगाने वाला था, उसका पैर फिसला और गिर गया। बीरबल फिर हँसने लगे। अकबर ने उनके हँसने का कारण जानना चाहा तो बीरबल ने बताया कि पहले उस युवक के सिर पर लकड़ियों की गट्ठर थी। अब उस पर सोने की मुहर भी है। उसका बोझ ज्यादा है। ये नहीं कर पायेगा। ये अब उस मुहर को पाने की अपेक्षा से कार्य कर रहा है।

हमारे बहुत से खिलाड़ी ओलम्पिक में खेल रहे हैं, परन्तु स्वर्ण पदक नहीं जीत पाए क्योंकि अपेक्षा का बोझ सहन नहीं कर पा रहे। रजत जीतने वाले ने कहा गीता के मार्ग पर चल रही हूँ। मैं तो बस अपना सर्वश्रेष्ठ प्रदर्शन करूँगी।

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।

इस भाव के साथ खेल रहे हैं तो मेडल आयेंगे। हमें अपेक्षाओं से बाहर निकलना होगा।

मेरी बहू बेटा मेरी सेवा करेंगे, मेरे बुढ़ापे की लाठी बनेंगे, इसी अपेक्षा के साथ उन्हें बड़ा किया। पढ़ाया लिखाया, विवाह कर बेटा विदेश चला गया। अपेक्षा की अपेक्षा भङ्ग हुई। न अपेक्षा करते, न भङ्ग होती। कभी-कभी आते और सेवा कर देते, उसमें भी प्रसन्नता होती इसलिए श्रीभगवान कहते हैं, कर्म करते रहो, फल की अपेक्षा मत करो। अपेक्षा के साथ में गड़बड़ निश्चित रूप से होती है।

12.12

श्रेयो हि ज्ञानमभ्यासाज्, ज्ञानाद्ध्यानं(वँ) विशिष्यते।
ध्यानात्कर्मफलत्याग:(स्),त्यागाच्छान्तिरनन्तरम्॥12.12॥

अभ्यास से शास्त्रज्ञान श्रेष्ठ है, शास्त्रज्ञान से ध्यान श्रेष्ठ है (और) ध्यान से (भी) सब कर्मों के फल की इच्छा का त्याग (श्रेष्ठ है)। क्योंकि त्याग से तत्काल ही परम शान्ति प्राप्त हो जाती है।

विवेचन:- ध्यान से अधिक श्रेष्ठ कर्मफल का त्याग है। त्याग से मन को शान्ति प्राप्त होती है। मन से अपेक्षा बाहर निकलते ही मन शान्त हो जाता है। अभ्यास से श्रेष्ठ है ज्ञान, ज्ञान से श्रेष्ठ है ध्यान, ध्यान से श्रेष्ठ है कर्मफल का त्याग।

त्याग से शान्ति का अनुभव होता है।

शान्ति के साथ बैठना है तो बस एक इस भाव में चले जाएँ कि मैं जो भी कर रहा हूँ, उसका फल मुझे मिलेगा, इस भावना से मैं बाहर हूँ। फल मिल गया तो ठीक, नहीं मिला तो ठीक है, इस भाव के साथ काम करेंगे, तो परम शान्ति को प्राप्त करेंगे। पहाड़ों पर वर्षा गिरती है या रेत में खेती करनी है अथवा स्वप्न में कोई वस्तु पायी है, उसमें हम कोई अपेक्षा करते नहीं। स्वप्न में यदि सोने का महल दिखाई दे तो क्या सुबह उठकर हम अपेक्षा करते हैं कि हम महल में चले जाएँ, नहीं। जीवन भी तो लम्बा स्वप्न है, फिर यहाँ अपेक्षाएँ क्यों लाते हैं? श्रीभगवान ने ये बातें कहीं और फिर भक्त के लक्षण बताना आरम्भ किया। यदि कोई भक्त भक्ति के मार्ग पर चलता है तो उसके अन्दर क्या घटता है, कैसे बाहर भक्ति छलकती है और कैसे प्रसन्नता दिखाई देती है?

12.13, 12.14

अद्वेष्टा सर्वभूतानां(म्), मैत्रः(ख्) करुण एव च|
निर्ममो निरहङ्कारः(स्), समदुःखसुखः क्षमी||13||
सन्तुष्टः(स्) सततं(यँ) योगी, यतात्मा दृढनिश्चयः।
मय्यर्पितमनोबुद्धिः(र्), यो मद्भक्तः(स्) स मे प्रियः॥12.14॥

सब प्राणियों में द्वेषभाव से रहित और मित्र भाव वाला (तथा) दयालु भी (और) ममता रहित, अहंकार रहित, सुख दुःख की प्राप्ति में सम, क्षमाशील, निरन्तर सन्तुष्ट, योगी, शरीर को वश में किये हुए, दृढ़ निश्चयवाला, मुझ में अर्पित मन बुद्धि वाला जो मेरा भक्त है, वह मुझे प्रिय है। (12.13-12.14)

विवेचन:- किसी भी प्राणी मात्र के प्रति मन में द्वेष न रहे। इसी भावना से नाग पञ्चमी का त्यौहार मनाया जाता है कि नाग के प्रति भी कोई द्वेष न रहे। सावन के अन्तिम दिन अमावस्या को बैलों की पूजा की जाती है। महाराष्ट्र में इसे बैल पोहा कहते हैं। जब रङ्गोली बनाते हैं तो आटे से बनाते हैं जिससे कि थोड़ी देर सज्जा हो जाए फिर वो आटा चीटियों के खाने के काम आ जाए। हम छत पर आने वाले कौवे, आङ्गन में आने वाले कुत्ते और गाय के लिए भी रोटी रखते हैं। सबके लिए मैत्री का भाव और करुणा का भाव हो। गीता के साथ मैत्री की। गीता के साथ मैत्री जीवन भर काम आयेगी। हो सकता है वृद्धावस्था में स्मृति चली जाए, फिर भी गीता याद रहेगी। अल्जाइमर में अल्प अवधि की स्मृति चली जाती है, पर पुरानी बात याद रहती हैं। आँखों पर चश्मा लग जाए। पढ़ने की समस्या हो जाए अथवा सुनने की क्षमता न रहे, तब विवेचन भी नहीं सुन पाएँगे। एक-एक अङ्ग साथ छोड़ देंगे किन्तु कण्ठ में यदि गीता है अर्थात् गीता कण्ठस्थ हो गई तो वह हृदय में चली जाती है। देखते हैं तो आँखों से काम चलता है, सुनते हैं तो कानों से काम चलता है, बोलते हैं तो जिह्वा से काम चलता है लेकिन कण्ठ से होता है तो श्रीमद्भगवद्गीता हृदयस्थ हो जाती है। उतारो और अन्दर उतारो गीता को, यह करना अत्यावश्यक है। दूध में शक्कर डालकर घोलनी पढ़ती है। घोले बिना दूध मीठा नहीं होता। इसी तरह श्रीमद्भगवद्गीता को भी घोलना पड़ेगा जीवन में। अद्भुत परिणाम पाते हैं आप। सबके लिए मैत्री का भाव, दया का भाव हो जीवन में।

निर्ममो निरहङ्कार,

अहङ्कार निकल जाए जीवन से इसलिए निरङ्कारी पन्थ का भी प्रारम्भ हुआ। अहङ्कार नहीं करेंगे जीवन में, गुरुद्वारे में आने वाले सभी भक्तजन के जूते साफ करेंगे। सारा अहङ्कार गल जाता है।

राम मन्दिर की प्रतिष्ठा हुई तब सभी साधु-सन्तों और गणमान्यों के जूते कौन सम्भाले? इसकी समस्या हुई। तब ये कार्य गीता परिवार को सौंपा गया। गीता परिवार के लोग सभी गणमान्यों को जूतों को हाथ नहीं लगाने देते थे। स्वयं जूते उतारते, उन्हें साफ करके रखते, हाथ धोने को पानी देते और वापसी में कूपन लेकर जूते स्वयं पहनाते। इस भाव के साथ राम मन्दिर में आने वाले सभी सन्तों की गीता परिवार ने सेवा की।

सम दुःखसुखः

दुःख और सुख दोनों में एक सी समता आ जाए परन्तु ऐसा कैसे हो सकता है? कोई बड़े प्रिय व्यक्ति, निर्धन हो जाए, श्रीभगवान के घर चले गए, बड़ा दर्द होता है इनका। इतना आवेग, इतना उद्वेग। कोई आ जाए तो बातें करके दर्द कुछ हल्का हो जाए। बारह दिन तक यही यादें चलती। फिर मेहमान आदि सब चले जाते। अपने-अपने काम में लग जाते। दुःख भी अब कम हो जाता। साल भर बाद बहुत कम हो जाता। दो चार साल बाद बहुत कम याद आती है। साल में एकआध बार। इसका अर्थ है- जो दुःख प्रिय के जाने के बाद जितना था, वह धीरे-धीरे कम होता जाता है, अर्थात् दुःख नश्वर है। जो बात दो साल बाद घटा सकते हैं, वो दो मिनट में भी घटा सकते हैं।

एक बहन लर्नगीता में गीता सिखाती थी। कोरोना में उनके पति बीमार हुए। चिकित्सालय में रहे। वहाँ किसी से मिलने की अनुमति नहीं थी। वहीं उनका देहान्त हो गया। पार्थिव शरीर भी परिवार को नहीं दिया गया। चिकित्सालय वालों ने ही दाह संस्कार किया। शाम को बहन ने सत्र लिया। सबने सोचा घटना रात को हुई होगी पर बाद में पता चला कि सुबह की ही घटना है। तब फोन करके उनसे पूछा, इतना धीरज कैसे? तब बहन ने कहा, जो घटना था, घट गया। पार्थिव शरीर भी घर नहीं आ रहा, क्या करना चाहिए? कोई घर नहीं आ रहा है तो मैंने सोचा गीता के श्लोक घर में गूञ्जें, इससे अच्छा क्या होगा? मैंने गीता के श्लोक सिखा दिए। गीता की गूँज घर में उठी तो सही। शरीर तो नश्वर है। एक दिन जाना है और ये दुःख आना है, फिर ये दुःख भी एक दिन चला जाएगा। जिसने सुख और दुःख दोनों के आने और जाने को समझ लिया, उनके लिए दोनों सम हो जाते हैं।

सुखदुःखे समे कृत्वा लाभालाभौ जयाजयौ।

यहाँ भी वही बात कही गई। सदा सन्तुष्ट रहने वाला योगी मुझे बड़ा प्रिय है। हम तो सन्तुष्ट होते ही नहीं। छोटी-छोटी बातों में असन्तुष्ट रहते हैं। कागज पर एक छोटा सा बिन्दु ही दिखाई देता है, कागज नहीं दिखता। निन्यानवें वस्तुएँ भगवान ने हमें अच्छी दीं। एक बात गलत कर दी तो हम बस उसी का रोना रोते रहते हैं। श्रीभगवान कहते हैं, जो सन्तुष्ट है वह मुझे प्रिय है और जिसने अपना निर्णय सुनिश्चित कर लिया है और मन और बुद्धि मुझे समर्पित कर दी है, ऐसा भक्त मुझे प्रिय है।

12.15

यस्मान्नोद्विजते लोको, लोकान्नोद्विजते च यः|
हर्षामर्षभयोद्वेगैः(र्), मुक्तो यः(स्) स च मे प्रियः||15||

जिससे कोई भी प्राणी उद्विग्न (क्षुब्ध) नहीं होता और जो स्वयं भी किसी प्राणी से उद्विग्न नहीं होता तथा जो हर्ष, अमर्ष (ईर्ष्या), भय और उद्वेग (हलचल) से रहित है, वह मुझे प्रिय है।

विवेचन:- मेरे किसी व्यवहार से किसी को पीड़ा नहीं पहुँचनी चाहिए और दूसरे प्राणी भी जिसे पीड़ा नहीं पहुँचाते। ऐसे लोग हर्ष, भय, उद्वेग आदि से परे हो जाते हैं।

एक बार बच्चों से पूछा कि आपको सुख का विलोम पता है क्या? बच्चों ने तुरन्त हाथ ऊपर करके बताया दुःख। अब आनन्द का विलोम शब्द बताइए? बच्चों ने कहा दुःख परन्तु दुःख तो सुख का विलोम है। बहुत सुख-सुख करेंगे तो अन्त में दुःख की प्राप्ति होने वाली है। फिर किसी ने बताया, उद्वेग, खिन्नता, खेद। क्षणिक आनन्द की अनुभूति हर्ष कहलाती है और क्षणिक सुख की अनुभूति खेद कहलाती है इसलिए रेलवे स्टेशन पर ट्रेन के देर से आने पर खेद प्रकट करने का उद्घोष होता है।

हावड़ा से मुम्बई की ओर जाने वाली ट्रेन चौबीस घण्टे देरी से आ रही है, इसका हमें खेद है। उसकी तो आवाज में भी खेद नहीं होता। खेद तो स्टेशन पर प्रतीक्षा करने वालों को होता है। जब ट्रेन आ जाती है तो उनका भी खेद समाप्त हो जाता है। खेद, दुःख क्षणिक हैं, परन्तु आनन्द सदैव रहता है। जो आनन्द की ओर चला गया वह कभी दुःख की तरफ जाता ही नहीं क्योंकि उसका विलोम नहीं है। आनन्द अनन्त है, अपरम्पार है। एक बार आनन्द में डुबकी लगाओ तो आनन्द की ही तरङ्ग उठती रहेगी, वह अन्दर की अनुभूति है। हर्ष-अमर्ष विलोम हैं। क्षणिक दुःख क्षणिक आनन्द से जो परे हो जाता है, भय और उद्वेग से भी बाहर निकल जाता है, वो भक्त मुझे बड़ा प्यारा होता है। हम कितने प्रतिक्रियात्मक (रिएक्टिव) होते हैं? किसी ने कुछ कह दिया तो प्रतिक्रिया शुरू। श्रीमद्भगवद्गीता पढ़ना आरम्भ किया है तो हम प्रतिक्रियात्मक नहीं बनेंगे। हम तुरन्त प्रतिक्रिया नहीं देंगे। घर में कोई कुछ कह भी दे तो कुछ नहीं कहना है। थोड़ा रुक जाओ, लम्बी गहरी साँसें लो, पैंतालीस सैकण्ड रुक जाओ। जब सामान्य हो जाएं तब अपनी बात कहो तो सामने वाले को बात समझ आएगी। क्रोध में मनुष्य का मस्तिष्क सो जाता है, विवेक खो जाता है।

दिनकर जी ने बहुत अच्छा कहा है-

जब नाश मनुज पर छाता है,
पहले विवेक खो जाता है।

श्रीमद्भगवद्गीता में कहा है-

त्रिविधं नरकस्येदं द्वारं नाशनमात्मनः।

कामः क्रोधस्तथा लोभस्तस्मादेतत्त्रयं त्यजेत्।

काम, क्रोध और लोभ तो नरक के दरवाजे हैं। नरक जाते ही शिरच्छेद हो जाता है। मस्तिष्क सो जाता है। इससे बाहर निकलना होगा। रोज रात को लिखें कि आज कितनी बार नकारात्मक हुआ, कितनी बार क्रोध आया।

एक चार्ट बनावें। A, AB, AC, BC, A मतलब anger. आज कितनी बार क्रोध किया? दिन में कई बार क्रोध आ जाता है। ठान लें, इस पर विजय प्राप्त करनी है। रात को लिखें- AC या anger control (क्रोध पर नियन्त्रण)। लम्बी गहरी साँस लेना है। क्रोध नियन्त्रण करना है। फिर BC, भगवत् चिन्तन। श्रीभगवान का नाम साथ में जोड़कर उतनी साँसें लेना है। अन्दर जाती साँस के साथ भगवत् नाम बाहर आती साँस के साथ भगवत् नाम। एक सप्ताह में ऐसा होने लगेगा, क्रोध आते ही याद जाएगा AC। लम्बी गहरी साँसें लो। दो सप्ताह में क्रोध आने से पहले ही जग जाआगे। याद आ जाएगा AC, BC करना है। क्रोध नियन्त्रण, भगवत् चिन्तन। महीने भर में क्रोध ही निकल जाता है लेकिन सजग रहना पड़ता है।

प्रकृति से बना शरीर है। अभ्यास छूटा नहींनहीं, क्रोध वापस। अभ्यास करते रहना है, सजग रहना है। श्रीमद्भगवद्गीता जगाने का शास्त्र है। अर्जुन तो भागने को राजी थे, परन्तु श्रीकृष्ण ने कहा भागो नहीं, जागो। अर्जुन तो बहाना है, श्रीमद्भगवद्गीता हमारे लिए बताई गई।

हमारे लिए भी यही सन्देश है,
भागो नहीं जागो।

12.16

अनपेक्षः(श्) शुचिर्दक्ष, उदासीनो गतव्यथः|
सर्वारम्भपरित्यागी, यो मद्भक्तः(स्) स मे प्रियः||16||

जो अपेक्षा (आवश्यकता) से रहित, (बाहर-भीतर से) पवित्र, चतुर, उदासीन, व्यथा से रहित (औरः सभी आरम्भों का अर्थात् नये-नये कर्मों के आरम्भ का सर्वथा त्यागी है, वह मेरा भक्त मुझे प्रिय है।

विवेचनः-

सारे दुःखों की जड़ अपेक्षा है, इसे त्याग दो।

अपेक्षा करने या न करने से कुछ नहीं बदलने वाला। जो घटना है विधि लिखित घटना है। आप चाहेंगे तो भी नहीं मिलने वाला और नहीं चाहेंगे तब भी मिल जायेगा, फिर अपेक्षाओं से बाहर निकल जाओ।

शुचिता अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

बाहर से शुचिता के लिए हम साबुन लगा लेते हैं अन्दर की शुचिता के लिए कौन सा साबुन लगाया जाए? मन को निर्मल बनाने के लिए श्रीमद्भगवद्गीता साबुन बन जाती है।

जब भी आए नाकारात्मकता, निराशा अथवा क्रोध, सावधान हो जाना।भगवद् नाम चिन्तन और पैंतालीस सैकण्ड की शान्ति। जो दुःखों से बाहर निकल गया। दुःख अस्थायी है, जो ये समझ गया समझो दुःखों से बाहर निकल गया।

सर्वारम्भ परित्यागी

मैं का त्याग करना। ये मैंने किया, ये मेरे कारण हुआ। ये मैं, सर्वनाश का कारण बनता है इसलिए मैने नहीं किया, तुमने किया है सोचना। मैं को निकाल दो श्रीभगवान अन्दर आ जायेंगे। उनको पाने की यही विधा है। मैं तब तक प्रतीक्षा करता हूँ, जब तक तुम जगह नहीं बनाओगे, वरना मैं
कहाँ से आऊँगा। जो ऐसा करता है, वह भक्त मुझे अत्यन्त प्रिय है।

12.17

यो न हृष्यति न द्वेष्टि, न शोचति न काङ्क्षति|
शुभाशुभपरित्यागी, भक्तिमान्यः(स्) स मे प्रियः||17||

जो न (कभी) हर्षित होता है, न द्वेष करता है, न शोक करता है, न कामना करता है (और) जो शुभ-अशुभ कर्मों से ऊँचा उठा हुआ (राग-द्वेष रहित) है, वह भक्तिमान् मनुष्य मुझे प्रिय है।

विवेचनः- जो हर्ष से परे हो गया, द्वेष से मुक्त हो गया, जो शोक नहीं करता है, जो अपेक्षाओं से बाहर हो गया, शुभ और अशुभ दोनों ही फलों का त्याग करने वाला। कुछ अच्छा मिला तो भी ठीक है, अच्छा नहीं मिला तो भी ठीक है, स्तुति मिली तब भी ठीक है, गाली मिली तब भी ठीक है, ऐसे भक्त मुझे अत्यन्त प्रिय हैं।

हत्या करना अशुभ है, फिर भी श्रीभगवान अर्जुन से कह रहे हैं, दुर्योधन को मार दे। ये अशुभ काम भी कभी कभी करने पड़ते

हैं। उसमे भी मैं का भाव निकाल देना। ये आततायी हैं जिन्होंने एक स्त्री, द्रौपदी के वस्त्रों को हाथ लगाया, वस्त्र हरण किया, ऐसे नीच लोगों को देह दण्ड देना क्षत्रियों का कर्त्तव्य होता है। यदि अशुभ कार्य भी कर्त्तव्य भाव से किया गया है तो उसके शुभ-अशुभ फलों का परित्याग अपने आप हो जाता है।

कोई जज कसाब को मृत्यु दण्ड देते हैं तो जज का कसाब से कोई बैर नहीं होता है। वो तो जज की कुर्सी पर बैठे हैं। उनका कर्त्तव्य है। यदि अशुभ काम भी कर्त्तव्य समझ कर किया जाए तो भी वह गड़बड़ नहीं करता।

12.18

समः(श्) शत्रौ च मित्रे च, तथा मानापमानयोः|
शीतोष्णसुखदुःखेषु, समः(स्) सङ्गविवर्जितः||18||

(जो) शत्रु और मित्र में तथा मान-अपमान में सम है (और) शीत-उष्ण (शरीर की अनुकूलता-प्रतिकूलता) तथा सुख-दुःख (मन बुद्धि की अनुकूलता-प्रतिकूलता) में सम है एवं आसक्ति रहित है (और) जो निन्दा स्तुति को समान समझने वाला, मननशील, जिस किसी प्रकार से भी (शरीर का निर्वाह होने न होने में) संतुष्ट, रहने के स्थान तथा शरीर में ममता आसक्ति से रहित (और) स्थिर बुद्धिवाला है, (वह) भक्तिमान् मनुष्य मुझे प्रिय है। (12.18-12.19)

विवेचनः- शत्रु और मित्र को भी समान मानने वाला, यह कैसे सम्भव है? जब शत्रुता ही नहीं तो शत्रु कैसा? शत्रु तो हमारे अन्दर है। काम, क्रोध ये शत्रु हैं।

काम एष क्रोध एष रजोगुणसमुद्भवः।
महाशनो महापापमा विद्ध्येनमिह वैरिणम्।

सबसे बड़े बैरी तो मेरी कामनाएँ, मेरा क्रोध हैं। श्रीभगवान ने ग्यारहवें अध्याय में जब विराट रूप दिखाया तो अर्जुन ने देखा कि दुर्योधन, दुःशासन, कर्ण, आचार्य द्रोण और पितामह भीष्म उनके मुख में खिंचे जा रहे हैं और प्रदीप्त अग्नि में जैसे पतङ्ग खिंचे जाते हैं वैसे ही सारे कौरव उनके मुख में खिंचे जा रहे हैं। श्रीभगवान उन्हें चबा रहे हैं और उनके होंठ से रक्त नीचे गिर रहा है। यह देखकर अर्जुन काँप गये। अर्जुन ने पूछा यह मैं क्या देख रहा हूँ?

श्रीभगवान ने कहा-

द्रोणं च भीष्मं च जयद्रथं च

कर्णं तथाऽन्यानपि योधवीरान्।

मया हतांस्त्वं जहि मा व्यथिष्ठा

युध्यस्व जेतासि रणे सपत्नान्

ये सभी मैंने मार दिए। अब बस तुम युद्ध जीतो और विजय को प्राप्त करो। ग्यारहवें अध्याय में श्रीभगवान कहते हैं- तुम बैरी नहीं कर्त्तव्य समझ कर युद्ध करो।

विवेचक के यहाँ आङ्गनवाड़ी में सन्ध्या दीप जलाते थे। माँ ने दीपक जलाते समय प्रार्थना सिखायी थी:-

शत्रुबुद्धिविनाशाय दीपज्योतिर्नमोऽस्तुते।

पहले लगा था शत्रुओं का विनाश हो जाए। बाद में पता चला मेरे अन्दर जो शत्रु बुद्धि है, वो ही मेरा शत्रु है। ऐसा दीपक मेरे

अन्दर जल जाए कि मेरे अन्दर का शत्रुत्व भाव नष्ट हो जाए।

कभी-कभी बादल ऐसे छा जाते हैं कि सोलर हीटर चलता ही नहीं। पानी गर्म होता ही नहीं। ऑफिस जल्दी जाना है। सोचते हैं चलो मुँह-हाथ धो लेंगे। जब धोए तो साबुन भी लगा लिया। अब साबुन थोड़े पानी से धुला नहीं तो एक मग पानी डाल लिया। पानी एकदम ठण्डा है। फिर एक और, फिर और चार-पाँच मग डाल लिया। अब ठण्डा पानी भी अच्छा लग रहा है। ठण्डे-ठण्डे पानी से नहाना चाहिए, गाना आए या न आए गाना चाहिए। गङ्गा जी में उतरते हैं, तब भी ऐसी ही घटना घटती है। पहले लगता है कैसे जायेंगे? जब पानी में उतर जाते हैं तब अच्छा लगने लगता है। अन्दर जो गर्माहट मिलती है गङ्गा मैया की, फिर निकलने का मन ही नहीं करता है। थोड़ी देर पहले जो ठण्डा पानी कष्ट दे रहा था, अब सुख देने लग गया, तो ये सब नश्वर हैं।

12.19

तुल्यनिन्दास्तुतिर्मौनी, सन्तुष्टो येन केनचित्|
अनिकेतः(स्) स्थिरमतिः(र्), भक्तिमान्मे प्रियो नरः||19||

विवेचन:-

निन्दा और स्तुति में भी स्थिर रहना सीखें

मौनी

जो व्यक्ति मौनी बन जाता है वह अन्दर उतरने लगता है। शब्दों से तो बाहर निकल रहें हैं। मौन होते ही अन्दर उतरने की प्रक्रिया शुरू हो जाती है। मौनी शब्द मनन से आया है, मन से मौन। कुछ साधु मौनी होते हैं। ईश्वर का मनन करते रहते हैं। दिन भर में कुछ समय मौन रहकर अन्दर उतरने का प्रयास करना चाहिए। जो है उसमे सन्तुष्टि रखें।

अनिकेत, अर्थात् जिसका कोई घर न हो।

एक आदमी के घर में आग लग गई। रोते पीटते बाहर निकला। हाय मेरे इतने वर्षों की तपस्या जल रही है। धूँ धूँ कर घर जल रहा है। किसी ने याद दिलाया भैया घर तो पिछले हफ्ते आपने बेच दिया था। उसे याद आया तो उसका दुःख कम हो गया। चलो, मेरा घर नहीं जल रहा। थोड़ी देर में बेटा आ गया, उसको पता चल गया कि घर जल रहा है, उसने लेने से मना कर दिया। कह रहा था जले हुए घर का मैं क्या करूँगा? फिर से रोने लग गया जोर-जोर से। जब तक मैं का भाव है, बड़ी उद्विग्नता आती है। घर के प्रति भी उस प्रकार का मोह न रहे। ऐसी स्थिर बुद्धि वाले लोग मुझे अत्यन्त प्रिय हैं।

अनिकेत आकाश भगवान शिव का नाम भी है। वे श्मशान में रहते हैं और आकाश की चादर ओढ़ लेते हैं। आकाश में कभी काले कभी सफेद बादल आते हैं लेकिन आकाश स्थिर रहता है। न पानी वाले बादल से दुःखी होता, न ही बिना पानी वाले सफेद बादल से। वो स्थिर रहता है।

भगवान बुद्ध के ऊपर किसी ने थूक दिया। उन्होंने हँसते-हँसते पूछा, और भी कुछ कहना है? वह व्यक्ति वहाँ से चला गया। लोगों को बड़ा आश्चर्य हुआ। अगले दिन उस व्यक्ति को पश्चाताप हुआ। उसने सोचा क्षमा माँगनी चाहिए। वह हार लेकर भगवान बुद्ध के पास गया। हार पहनाया और क्षमा माँगी। भगवान ने पूछा और भी कुछ कहना है। लोगों ने पूछा, कल भी उसके गाली देने के बाद भी आपने यही पूछा था, आज क्षमा माँग रहा है तब भी यही पूछ रहे हैं?

उन्होंने कहा, इसने गाली दी थी, मैंने ली नहीं थी। ऐसे ही आज पुष्पों का हार पहना रहा है, मैं ले थोड़े ही रहा हूँ। गाली क्या, पुष्प क्या? दोनों एक ही बात हैं।

मैंने उसका स्वीकार ही नहीं किया।
मैं स्वीकार करूँगा तब ही वह मेरा होगा।

12.20

ये तु धर्म्यामृतमिदं(यँ), यथोक्तं(म्) पर्युपासते।
श्रद्दधाना मत्परमा, भक्तास्तेऽतीव मे प्रियाः॥12.20॥

परन्तु जो (मुझ में) श्रद्धा रखने वाले (और) मेरे परायण हुए भक्त इस धर्ममय अमृत का जैसा कहा कहा है, (वैसा ही) भली भांति सेवन करते हैं, वे मुझे अत्यन्त प्रिय हैं।

विवेचन:- भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं- हे अर्जुन! मुझे वे भक्त अति प्रिय हैं जो पूरी श्रद्धा से मेरे परायण हो जाते हैं। जैसा मैंने बोला वैसा का वैसा अमृत परायण करने वाला भक्त मुझे अत्यन्त प्रिय लगता है।

प्रश्नोत्तर सत्र:-

प्रश्नकर्ता:- प्रबोध भैया
प्रश्न:- श्रीभगवान जी ने अपेक्षा किए बिना कर्म करने को कहा है या कर्म फल का त्याग करने को कहा है।
बुद्ध भगवान की भी एक प्रसिद्ध पंक्ति है- इच्छा ही समस्त बुराइयों की स्त्रोत है (Desire is the source of all evil.)
प्रश्न यह है कि अपेक्षा और इच्छा में क्या समानता है?
उत्तर:- इच्छा तो बिना कर्म किए भी कोई कर सकता है। जैसे आप किसी के लिए यह सोचो कि वह आपसे अच्छा व्यवहार करे जबकि आपने उसके लिए कुछ किया ही नहीं और यदि आप किसी के साथ अच्छा व्यवहार करते हो और सोचो कि वह भी आपके साथ अच्छा व्यवहार करे तो यह अपेक्षा है। इच्छा एक तरफ होती है और अपेक्षा दो तरफा। श्रीभगवान ने अपेक्षा करने के लिए मना किया है अर्थात् बिना किसी अपेक्षा के अपने कर्म को करने के लिए निर्देशित किया है। आप कर्म कीजिए फल की अपेक्षा मत कीजिए।

प्रश्नकर्ता:- प्रबोध भैया
प्रश्न:- क्या सभी प्रकार की इच्छाएँ खराब हैं?
उत्तर:- अनेक प्रकार की इच्छाएँ होती हैं। आप जिस प्रकार की इच्छा की बात कर रहे हो, वह इच्छा शुभ सङ्कल्प होती है किन्तु हमें इन शुभ सङ्कल्पों को पूर्ण करते समय कर्म फल की अपेक्षा नहीं करनी चाहिए क्योंकि जब हम कार्य करते हैं और उसके प्रतिफल की अपेक्षा करते हैं तो हम बहुत कम फल के बारे में सोच पाते हैं किन्तु जब आप कर्म फल को श्रीभगवान के ऊपर छोड़ देते हो तो आपको कई गुना कर्म फल प्राप्त होता है जितना कि आपने सोचा भी नहीं होगा और न आप सोच सकते हैं। वह कर्मफल आपकी कल्पना से परे होगा। इसका एक साक्षात उदाहरण लर्न गीता का यह ऑनलाइन प्रकल्प है। जब हमने इसे प्रारम्भ किया, तब कभी यह नहीं सोचा था कि दस लाख साधक जुड़ जाएँगे और सब कुछ श्रीभगवान पर छोड़ दिया था। अब देखिए हमारी कल्पना से भी परे दस लाख साधक जुड़ चुके हैं। निरन्तर प्रतिदिन जुड़ने जा रहे हैं। बारह हजार सेवी अपनी सेवाएं प्रतिदिन नि:शुल्क दे रहे हैं।

प्रश्नकर्ता:- विद्या दीदी
प्रश्न:- क्रोध को कम करने और सहनशीलता को बढ़ाने के लिए क्या करें?
उत्तर:- यदि आपने यह मान लिया कि आपको बहुत क्रोध आता है तो आपने एक पग आगे बढ़ा लिया है। अब प्रतिदिन सुबह श्रीभगवान के आगे बैठकर पूरे मन से उनसे प्रार्थना कीजिए कि मुझे इस क्रोध से बचा लीजिए और मुझे सहनशीलता प्रदान कीजिए। प्रतिदिन रात को लिखिए, आपको कितनी बार क्रोध आया, क्यों आया? और उस पर चिन्तन कीजिए। धीरे-धीरे अभ्यास से क्रोध कम होता चला जाएगा और सहनशीलता बढ़ती जाएगी।

प्रश्नकर्ता:- रेखा दीदी
प्रश्न:- भगवत् चिन्तन किस प्रकार करना चाहिए?
उत्तर:- अपनी श्वास के साथ मुँह बन्द करके आपको जो भी मन्त्र ठीक लगता है, वह श्वास अन्दर लेते समय धीरे-धीरे मन-मन में बोलिए और श्वास छोड़ते समय पुनः उसको बोलिए।

।।ॐ श्रीकृष्णार्पणमस्तु।।

ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासु उपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां(यँ) योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे भक्तियोगो नाम द्वादशोऽध्यायः॥

इस प्रकार ॐ तत् सत् - इन भगवन्नामों के उच्चारणपूर्वक ब्रह्मविद्या और योगशास्त्रमय श्रीमद्भगवद्गीतोपनिषदरूप श्रीकृष्णार्जुनसंवाद में 'भक्तियोग' नामक बारहवाँ अध्याय पूर्ण हुआ।

हमें विश्वास है कि आपको विवेचन की रचना पढ़कर अच्छा लगा होगा। कृपया नीचे दिए लिंक का उपयोग करके हमें अपनी प्रतिक्रिया दीजिए।

https://vivechan.learngeeta.com/feedback/

विवेचन-सार आपने पढ़ा, धन्यवाद!
हम सब गीता सेवी, अनन्य भाव से प्रयास करते हैं कि विवेचन के अंश आप तक शुद्ध वर्तनी में पहुंचे। इसके बाद भी वर्तनी या भाषा संबंधी किन्हीं त्रुटियों के लिए हम क्षमा प्रार्थी हैं।

जय श्री कृष्ण !
संकलन: गीता परिवार - रचनात्मक लेखन विभाग

हर घर गीता, हर कर गीता!
Let's come together with the motto of Geeta Pariwar, and gift our Geeta Classes to all our Family, friends & acquaintances

https://gift.learngeeta.com/

गीता परिवार ने एक नवीन पहल की है। अब आप पूर्व में सञ्चालित हुए सभी विवेचनों कि यूट्यूब विडियो एवं पीडीऍफ़ को देख एवं पढ़ सकते हैं। कृपया नीचे दी गयी लिंक का उपयोग करे।

https://vivechan.learngeeta.com/

|| गीता पढ़े, पढ़ायें, जीवन में लाये ||
||ॐ श्रीकृष्णार्पणमस्तु ||